

ईशावास्योपनिषद्

अनुवाद कर्ता: सञ्जय मोहन मित्तल

Eshaavaasyopanishad

Translated by: Sañjay Mohan Mittal

सारांश

ईशावास्योपनिषद् में ईश्वर के सर्वव्यापी गतिरहित स्वरूप का वर्णन करते हुए ओ३म् को ईश्वर का प्राथमिक नाम घोषित किया गया है। आचार व्यवहार के मूल सिद्धान्तों का उपदेश देते हुए, सौ वर्ष तक जीने की इच्छा रखने की और जीवन के हर पल को अन्तिम पल की तरह जीने की सलाह दी गई है। अविनाशी प्रभु का ध्यान ही जन्म मृत्यु के चक्र से निकलने का मार्ग है। इसके अतिरिक्त प्रभु की मूर्खों से दूरी एवम् विद्वानों से समीपता बताते हुए आत्मज्ञान की अवेहलना करने के दोष दिखाए गए हैं। अज्ञान से विद्या की ओर ले जाने वाले चक्र के महत्त्व को बताते हुए विद्या से उत्पन्न अहंकार के प्रति सचेत किया गया है।

यह उपनिषद् यजुर्वेद की काण्व शाखा के अध्याय ४० की अनुकृति हैं। यजुर्वेद की वाजसनेयी शाखा, जिसको आर्य समाज ने मूल माना है, में कुछ शब्द भिन्न हैं, परन्तु इससे मन्त्रों के भाव और अर्थ में कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता।

प्रथम मन्त्र में ईश्वर के आस्तित्व और उसको जानने के बाद कैसा व्यवहार करें, यह बताया गया है।

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥१॥

ईशावास्य १, यजुः ४०:१

ईशा। वास्यम्। इदम्। सर्वम्। यत्। किम्। च। जगत्याम्। जगत्॥

तेन। त्यक्तेन। भुञ्जीथाः। मा। गृधः। कस्य। स्वित्। धनम्॥१॥

(ईशा) परम पिता परमेश्वर (इदम्) इस ब्रह्माण्ड में, (यत् किम्) जो भी (जगत्याम् जगत्) अति विशाल से लेकर अतिसूक्ष्म जगत हैं, (सर्वम्) उन सभी में (वास्यम्) निवास करते हैं और उनको आच्छादित भी करते हैं। (तेन) उस परमेश्वर द्वारा (त्यक्तेन) मनुष्यों के लिए छोड़े गए भोग्य को बिना लिप्त हुए, त्याग की भावना के साथ (भुञ्जीथाः) भोगो (च) और अन्य (कस्य स्वित्) किसी के भी (धनम्) धन की (गृधः) अभिलाषा (मा) मत करो।

दूसरे मन्त्र में वेदोक्त कर्म की उत्तमता दर्शाई गई है।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतः समाः।

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥२॥

ईशावास्य २, यजुः ४०:२

कुर्वन्। एव। इह। कर्माणि। जिजीविषेत्। शतम्। समाः॥

एवम्। त्वयि। न। अन्यथा। इतः। अस्ति। न। कर्म। लिप्यते। नरे॥२॥

Synopsis

In the Eeshaavaasyopaniṣhad, the sages have described the all pervading, omnipresent Supreme Being whose primary name is OM. Enumerating the basic code of conduct, they have advised that everyone should have a desire to live for one hundred years and utilize one's lifetime to meaningfully perform God's work. They also advise that every moment of life should be lived as if it were the last. Keeping the indestructible God in our mind all the time, is the only way to attain salvation from the bondage of the cycle of life and death. While stating that God is very far from the ignorant and very close to the learned, they highlight the ills of ignoring universal knowledge. While describing the importance of the virtuous cycle leading from ignorance to illumination, they have cautioned everyone against developing an ego, which may result if the acquired knowledge is not properly implemented. This upaniṣhad is a replica of chapter 40 from the Kaṇva branch of the Yajurveda. In this upaniṣhad, a few words are different from the text In the Vajasaneyee branch of the Yajurveda, which is considered as the standard by the scholars from Arya Samaj. This differences however, are immaterial and do not change the context or the meaning of the mantras.

In the first mantra the sage describes the omnipresence of God and defines some basic rules of conduct.

**1. eeshaa vaasyamidaṁ sarvaṁ yatkiñcha jagatyaaṁ jagat,
tena tyaktena bhuñjeethaa maa gridhaḥ kasya sviddhanam.**

eeshaa vaasyam idam sarvam
yat kim cha jagatyaam jagat,
tena tyaktena bhuñjeethaah
maa gridhaḥ kasya svit dhanam.

Eeshaavaasya 1, Yajuh 40.1

(eeshaa) God (vaasyam) pervades and covers (sarvam) everything that exists (idam) here in this universe, (kim) whatever (yat) those entities may be, (jagatyaam) large celestial bodies (cha) or (jagat) smaller entities contained within an entity. (bhuñjeethaah) Enjoy (tyaktena) with a feeling of detachment, whatever has been left for you (tena) by God and (maa) never (gridhaḥ) covet (kasya svit) someone else's (dhanam) wealth.

In the second mantra the sage describes the importance of selfless actions.

**2. kurvanneveha karmaaṇi jījeeviṣhechchataṁ samaah,
evan tvayi naanyatheto'sti na karma lipyate nare.**

Eeshaavaasya 2, Yajuh 40.2

kurvan eva iha karmaaṇi jījeeviṣhet shatam samaah,
evam tvayi na anyathaa itaḥ asti na karma lipyate nare.

(इह) इस संसार में प्रसन्नतापूर्वक (शतम्) सौ (समाः) वर्ष (जिजीविषेत्) जीने की इच्छा रखते हुए (एव) केवल (कर्माणि) वेदोक्त कर्म (कुर्वन्) करो । (एवम्) और (त्वयि) तेरे (नरे) अपने स्वार्थवश (कर्म) कोई भी कर्म (न) न (लिप्यते) करने से (इतः अन्यथा) धर्म के मार्ग से भटकाव (न) नहीं (अस्ति) होता।

तीसरे मन्त्र में बताया गया है कि आत्मिक ज्ञान को न मानने वालों की क्या गति होती है।

असुर्य्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः ।

तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥३॥

ईशावास्य ३, यजुः ४०.३

असुर्य्याः । नाम । ते । लोकाः । अन्धेन । तमसा । आवृता इत्याऽवृताः ॥

तान् । ते । प्रेत्येति प्रऽइत्य । अभिगच्छन्ति । ये । के । च । आत्महन इत्यात्मऽहनः । जनाः ॥३॥

(ये) जो (तमसा) अज्ञान के (अन्धेन) अन्धकार से (आवृताः) ढके हुए हैं (च) और (के) जो कोई (आत्महनः) स्वयं को ही नुकसान पहुँचाने वाले हैं, (ते) वे (जनाः) मनुष्य (असुर्य्याः) दैत्य, राक्षस व पिशाच आदि (नाम) नामों से जाने जाते हैं । (ते) वे (प्रेत्येति) मृत्योपरान्त और जीवित अवस्था में भी (तान्) उनकी अन्धकारपूर्ण (लोकाः) लोको को (अभिगच्छन्ति) प्राप्त होते हैं ।

आत्मिक उन्नति के उपाय पहले दो मन्त्रों में बताए गए हैं । इन उपायों और अन्य वेदोक्त कर्तव्यों के विरुद्ध आचरण करना ही अपनी आत्मा का हनन करना है । ईश्वर को किसी मूर्ति अथवा स्थान पर सीमित समझना, इन्द्रियों के वश में अन्धाधुन्ध भोग में लिप्त होना, किसी अन्य के धन पर गिद्ध दृष्टि डालना, सौ वर्ष से पहले ही जीने की चाह खो देना और अपना समय व जीवन व्यर्थ कामों में व्यतीत कर देना, यह उन आत्महनन करने वाले कर्मों के उदाहरण हैं ।

चौथे मन्त्र में ईश्वर के साक्षात्कार के विषय में बताया गया है ।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवाऽआप्नुवन् पूर्वमर्षत् ।

तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥४॥

ईशावास्य ४, यजुः ४०.४

अनेजत् । एकम् । मनसः । जवीयः । न । एनत् । देवाः । आप्नुवन् । पूर्वम् । अर्षत् ॥

तत् । धावतः । अन्यान् । अति । एति । तिष्ठत् । तस्मिन् । अपः । मातरिश्वा । दधाति ॥४॥

वह (एकम्) एकमात्र (अनेजत्) गतिरहित दृढ परमात्मा, जो सभी स्थानों पर (पूर्वम्) पहले से ही (अर्षत्) विद्यमान होने के कारण (मनसः) मन से भी (जवीयः) तेज गति वाला कहा गया है, (एनत्) वह (देवाः) दृष्टि आदि इन्द्रियों से (आप्नुवन्) प्राप्त (न) नहीं होता । (तत्) वह (तिष्ठत्) सर्वत्र स्थिर हो अपनी सर्वव्यापकता और विस्तार के कारण (धावतः) विषयों के पीछे भागती हुई (अन्यान्) इन्द्रियों का (अति एति) उल्लङ्घन कर जाता है । स्वयं भार रहित होकर भी (तस्मिन्) वह (मातरिश्वा) वायुमण्डल में (अपः) जल के भार को (दधाति) धारण करता है ।

(iha) In this World, (jijeeviṣhet) with a desire to happily live for (shatam) one hundred (samaaḥ) years, (kurvan) perform (eva) only (karmaaṇi) virtuous actions as sanctified in the Vedas. (evam) And in order (itaḥ) to (na asti) remove (aanyathaa) any diversions from the righteous path, (tvayi) you (na) should never (lipyate) be engaged (karma) in performing actions (nare) for selfish reasons.

In the third mantra the sage describes the fate of people who ignore the divine knowledge and engage in self-deprecating behavior.

3. asuryyaa naama te lokaa'andhena tamasaavṛitaah, taanste pretyaabhigachchhanti ye ke chaatmahano janaah.

asuryyaaḥ naama te

Eeshaavaasya 3, Yajuh 40.3

lokaah andhena tamasaa aavṛitaah,

taan te pretya abhi-gachchhanti

ye ke cha aatmahanah janaah.

(te) Those (janaah) humans (ye ke) who engage (aatmahanah) in self-deprecating behaviors (cha) and those who are (aavṛitaah) covered in (andhena) darkness (tamasaa) of ignorance (naama) are called (asuryyaaḥ) demons; (te) they (pretya) on their death and even during life, (abhigachchhanti) go to (taan) those similar dark (lokaah) Worlds.

Some of the behaviors that accentuates one's spirituality and well being, are defined in the first two mantras. Any conduct that is contrary to what is sanctified in the Vedas, is a self-deprecating behavior. Thinking of God as limited to an idol or a place, getting engrossed in carefree consumption, setting a hawk eye on someone else's wealth or possessions, not having a desire to live for 100 years, wasting away time and life in mundane activities and getting distracted from the righteous path, would be some examples of the self deprecating behaviors.

In the fourth mantra the sage discusses the ways to perceive God.

4. anejadekam manaso javeeyo nainaddevaa'aapnuvan poorvamarṣhat, taddhaavato'nyaanatyeti tiṣṭhattasminnapo maatarishvaa dadhaati.

anejat ekam manasaḥ javeeyah

Eeshaavaasya 4, Yajuh 40.4

na enat devaah aapnuvan poorvam arṣhat,

tat dhaavataḥ anyaan ati eti tiṣṭhat

tasmin apaḥ maatarishvaa dadhaati.

(ekam) The One, (anejat) unwavering motionless God, who (arṣhat) already exists (poorvam) everywhere before anyone can reach there mentally or physically and hence is considered (javeeyah) faster than (manasaḥ) mind; (enat) that God (na) cannot be (aapnuvam) perceived through (devaah) senses. By virtue of his (tiṣṭhat) steadfast omnipresence and vastness, (tat) he is (ati eti) beyond (anyaan) the senses that are (dhaavataḥ) chasing the material desires. (tasmin) He even while being weightless himself, (dadhaati) holds all of (apaḥ) the water in (maatarishvaa) the atmosphere.

गति अथवा कम्पन करने की आवश्यकता तब पड़ती है जब किसी जीव या वस्तु को अपना स्थान बदल कर कहीं और जाना हो । ईश्वर तो सर्वव्यापी है और इस जगत और उससे भी परे ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ ईश्वर का जाना शेष हो तो फिर उसको गति करने की आवश्यकता ही क्या है । इससे यहीं निष्कर्ष निकलता है कि ईश्वर कम्पन रहित व गति रहित है; अर्थात् उसकी प्राकृतिक आवृत्ति शून्य है । भौतिकी विज्ञान के अनुसार अनुनाद के लिए दो वस्तुओं की प्राकृतिक आवृत्ति मिलना अत्यन्त आवश्यक है । इन्द्रियाँ तो हर समय इच्छाओं की पूर्ति के लिए भागती रहती हैं । उनका गति शून्य ईश्वर से अनुनाद असम्भव है । इसी कारण ईश्वर इन्द्रियों का विषय नहीं है । आँखें उसको देख नहीं सकती, कान उसको सुन नहीं सकते, नाक उसको सूँघ नहीं सकती, जिह्वा उसे चख नहीं सकती और त्वचा उसका स्पर्श नहीं कर सकती । और जिसको इन्द्रियाँ देख, सुन, सूँघ, चख व स्पर्श कर सकती हैं वह ईश्वर नहीं हो सकता ।

पाँचवे मन्त्र में ईश्वर के बारे में विद्वानों और अविद्वानों के विचार बताए गए हैं । अज्ञानी ईश्वर को चलायमान समझ उसे सीमित रूप में पूजते हैं ।

तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके ।

तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥५॥

ईशावास्य ५, यजुः ४०.५

तत् । एजति । तत् । न । एजति । तत् । दूरे । तत् । ऊँइत्यूँ । अन्तिके ॥

तत् । अन्तः । अस्य । सर्वस्य । तत् । ऊँइत्यूँ । सर्वस्य । अस्य । बाह्यतः ॥५॥

(तत्) वह (न) स्वयं न (एजति) गति करते हुए भी (तत् एजति) इस ब्रह्माण्ड में सबको चलायमान रखता है । अविद्वानों को (तत्) वह (दूरे) बहुत दूर प्रतीत होता है, परन्तु विद्वानों के (तत्) वह (अन्तिके) अत्यन्त समीप (उ) ही है । (तत्) वह (सर्वस्य) सबके के (अन्तः) अन्दर और (बाह्यतः) बाहर (उ) भी (अस्य) विद्यमान है ।

छठे मन्त्र में पुनः ईश्वर की सर्वव्यापकता के विषय में कहा गया है ।

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति ।

सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥६॥

ईशावास्य ६, यजुः ४०.६

यः । तु । सर्वाणि । भूतानि । आत्मन् । एव । अनुपश्यतीत्यनुपश्यति ॥

सर्वभूतेष्विति सर्वभूतेषु । च । आत्मानम् । ततः । न । विजुगुप्सते ॥६॥

(यः) जो विद्वान् (आत्मन्) परमात्मा के अन्दर (एव) ही (सर्वाणि) सब (भूतानि) प्राणियों व अप्राणियों को (अनुपश्यति) ध्यानदृष्टि से देखता है (च) और (तु) जो (सर्व) सब (भूतेषु) प्रकृत्यादि पदार्थों में भी (आत्मानम्) परमात्मा को देखता है (ततः) वह (विजुगुप्सते) पाप में (न) नहीं पड़ता ।

ईशावास्योपनिषद् । Eeshaavaasyopaniṣhad

God does not need to move. Motion would be required for someone to go to a particular place where he/she is not currently present. God however is already present everywhere and there is no place, tiny or large, where he still needs to visit. Hence he is unwavering and motionless. In physics, we have learned that in order for two objects to resonate, their natural frequencies must be the same. God being unwavering has a zero frequency while the senses are always chasing desire. Hence the senses can never resonate with or perceive God. Eyes can't see him, ears can't hear him, nose can't smell him, tongue can't taste him and skin can't feel him. This also implies that anyone or anything that eyes can see, ears can hear, nose can smell, tongue can taste and skin can feel does not qualify to be God.

In the fifth mantra the sage discusses God's closeness to the learned and distance from the ignorant. Ignorant find it difficult to accept the omnipresence of God. They think of him as a being in motion and worship a limited form as the representation of God.

5. tadejati tannaijati tad doore tadvantike, tadantarasya sarvasya tadu sarvasyaasya baahyataḥ.

tat ejati tat na ejati

Eeshaavaasya 5, Yajuh 40.5

tat doore tat u antike,

tat antaḥ asya sarvasya

tat u sarvasya asya baahyataḥ.

(tat) He (na) does not need to (ejati) move but (tat) he is (ejati) the causal force behind the movement of any entity. (tat) He (doore) seems very far to the ignorant but (tat) (u) (antike) is very close to the learned. (tat) He (asya) exists (antarasya) inside (sarvasya) everyone (u) as well as (baahyataḥ) outside (sarvasya) everyone.

In the sixth mantra the sage again describes the omnipresence of God.

6. yastu sarvaāṇi bhootaanyaatmannevaanupashyati, sarvabhootēṣhu chaatmaanān tato na vijugupsate.

Eeshaavaasya 6, Yajuh 40.6

yaḥ tu sarvaāṇi bhootaani

aatman eva anu-pashyati,

sarva-bhootēṣhu cha aatmaanam

tataḥ na vijugupsate.

(yaḥ tu) A learned person who (eva) definitely (anupashyati) perceives (sarvaāṇi) the entire (bhootaani) creation (aatman) as a part of God (cha) and (aatmaanam) God inside (sarva) every (bhootēṣhu) being and non living thing, (tataḥ) that person (na) never (vijugupsate) acts sinfully.

सातवें मन्त्र में यह बताया गया है कि सभी प्राणियों के साथ स्वयं अपने जैसा व्यवहार करना ही उचित है ।

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।

तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः ॥७॥

ईशावास्य ७, यजुः ४०.७

यस्मिन् । सर्वाणि । भूतानि । आत्मा । एव । अभूत् । विजानत इति विजानतः ॥

तत्र । कः । मोहः । कः । शोकः । एकत्वमित्येकत्वम् । अनुपश्यत इत्यनुपश्यतः ॥७॥

(यस्मिन्) जो विद्वान् (सर्वाणि) सभी (भूतानि) प्राणीमात्र को परमात्मा के सहचारी जान अपने (एव) ही (आत्मा) आत्मतुल्य (अभूत्) मानते हैं, उस (एकत्वम्) एकमात्र परमेश्वर में (विजानतः) ध्यानदृष्टि से अद्वितीय भाव (अनुपश्यतः) देखने वाले (तत्र) उन योगियों को (कः) कैसा (मोहः) मोह और (कः) कैसा (शोकः) शोक ।

आठवें मन्त्र में परमेश्वर के गुणों का विस्तृत वर्णन कर उसके उनही गुणों के कारण पूजा के योग्य बताया गया है ।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।

कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूयाथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥८॥

ईशावास्य ८, यजुः ४०.८

सः । परि । अगात् । शुक्रम् । अकायम् । अव्रणम् । अस्नाविरम् । शुद्धम् । अपापविद्धमित्यपापविद्धम् ॥

कविः । मनीषी । परिभूरिति परिभूः । स्वयम्भूरिति स्वयम्भूः । याथातथ्यत इति याथातथ्यतः । अर्थान् । वि ।

अदधात् । शाश्वतीभ्यः । समाभ्यः ॥८॥

जो (परि) सब जगह (अगात्) गया हुआ, (शुक्रम्) शुद्ध स्वरूप (अकायम्) कायारहित, (अव्रणम्) छिद्ररहित, (अस्नाविरम्) कर्म बन्धनों से परे, (शुद्धम्) पवित्र, (अपापविद्धम्) पाप से दूर, (कविः) सर्वव्यापक, (मनीषी) सब जीवों की मनोवृत्ति जानने वाला, (परिभूः) दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला, (स्वयम्भूः) अनादि, (शाश्वतीभ्यः) उत्पत्ति और विनाश से रहित, (वि) विशेष कर (याथातथ्यतः) यथार्थ भाव से (समाभ्यः) सबके लिए (अर्थान्) वेदों के ज्ञान को (अदधात्) बनाने वाला, (सः) वही परमेश्वर उपासना के योग्य है ।

यदि पिछले मन्त्रों को समझने के बाद भी ईश्वर के स्वरूप के विषय में कोई शंका शेष हो तो उसका निवारण इस मन्त्र में किया गया है । ईश्वर अनादि, अनन्त व कायारहित है । अर्थात् जिसकी जन्म व मृत्यु हुई और जो कभी भी सशरीर रहा, वह ईश्वर नहीं हो सकता ।

In the seventh mantra the sage advises to treat all beings as one would like his/her own self treated by others.

7. yasminsarvaṇi bhootaanyaatmaivaabhoodvijaanataḥ,

tatra ko mohaḥ kaḥ shoka'ekatvamanupashyataḥ. Eeshaavaasya 7, Yajuh 40.7

yasmin sarvaṇi bhootaani
aatmaa eva abhoot vijaanataḥ,
tatra kaḥ mohaḥ kaḥ shokaḥ
ekatvam anu-pashyataḥ.

(*yasmin*) **Those learned humans who** (*abhoot*) **perceive** (*sarvaṇi*) **every** (*bhootaani*) **being as God's companion** (*aatmaa iva*) **and treat them as their own self, and** (*anu-pashyataḥ*) **visualize** (*ekatvam*) **the unparalleled qualities of that one God** (*vijaanataḥ*) **through meditation, (kaḥ) what is** (*mohaḥ*) **attachment and (kaḥ) what is** (*shokaḥ*) **sorrow** (*tatra*) **to them!**

In the eighth mantra the sage details various abstract qualities of God and declares that he is the only one to be worshipped because of those qualities.

8. sa paryagaachchukramakaayamavranamasnaaviraṁ

shuddhamapaapaviddham,

kavirmaneeṣhee paribhooḥ svayambhooryaathaataathyato'rthaan

vyadadhaachchhaashvateebhyaḥ samaabhyaḥ. Eeshaavaasya 8, Yajuh 40.8

sa pari agaath shukram akaayam avranam asnaaviram shuddham apaapa-viddham,
kaviḥ maneeṣhee pari-bhooḥ svayam-bhooḥ
yaathaa-tathyataḥ arthaan vi adadhaat shaashvateebhyaḥ samaabhyaḥ.

The supreme being who is (*agaath*) **already present** (*pari*) **all over, is** (*shukram*) **pure,** (*akaayam*) **without any physical body,** (*avranam*) **without any defects,** (*asnaaviram*) **beyond all attachments to the actions,** (*shuddham*) **devoid of any impurities,** (*apaapa-viddham*) **distant from all sins, (kaviḥ) omnipresent, (maneeṣhee) all knowing,** (*paribhooḥ*) **destroyer of evil, (svayambhooḥ) forever existing and never born,** (*shaashvateebhyaḥ*) **indestructible, (vi adadhaat) provider of the** (*yaathaa tathyataḥ*) **true** (*arthaan*) **knowledge through Vedas to** (*samaabhyaḥ*) **everyone; (sa) he is the only one who should be worshipped.**

This mantra removes any doubts on God's characteristics that may remain after studying the previous mantras. God is eternal, without any beginning or an end, is without any form and does not have a physical body. Hence, anyone in our history, who was born, has experienced death or had a physical body, can not be classified as God.

अगले छः मन्त्रों में दो चक्रों के बारे में बताया गया है; पहला अविद्या और विद्या का चक्र और दूसरा जीवन और मृत्यु का चक्र । इन चक्रों के एक पहलू को सत्य मान उसी में ही रम जाना मानव जीवन की सबसे बड़ी भूल है । इन चक्रों के दोनो पहलुओं को स्वीकार करते हुए एक पहलू से दूसरे पर जाने की कला ही मनुष्य को उन्नति व मोक्ष की ओर ले जा सकती है ।

नवें मन्त्र में अविद्या अथवा विद्या का अहंकार, इन दोनों से होने वाली हानियों के विषय में बताया गया है ।

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते ।

ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायां रुताः ॥१॥

ईशावास्य ९, यजुः ४०.१२

अन्धम् । तमः । प्र । विशन्ति । ये । अविद्याम् । उपासन्तु इत्युपऽआसते ॥

ततः । भूयऽइवेति भूयःऽइव । ते । तमः । ये । ऊँऽइत्यूँ । विद्यायाम् । रुताः ॥१॥

(ये) जो लोग (अविद्याम्) अज्ञान में (उपऽआसते) रहते हैं और उससे बाहर निकलने का प्रयास नहीं करते, वह (अन्धम् तमः) अन्धकार में (प्र विशन्ति) जीते हैं, और (ये) वह ज्ञानी जो (विद्यायाम्) विद्या प्राप्ति से (रुताः) अहंकारी हो जाते हैं (ते) वह (ततः) इससे (भूयऽइव उ) भी अधिक (तमः) अन्धकार मय जीवन जीते हैं ।

दसवें मन्त्र में अज्ञानमय जीवन और ज्ञान के दुरुपयोग, दोनों ही की हानियों के विषय में बताया गया है।

अन्यदेवाहुर्विद्यायाऽअन्यदाहुरविद्यायाः ।

इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचक्षिरे ॥१०॥

ईशावास्य १०, यजुः ४०.१३

अन्यत् । एव । आहुः । विद्यायाः । अन्यत् । आहुः । अविद्यायाः ॥

इति । शुश्रुम । धीराणाम् । ये । नः । तत् । विचक्षिरे इति विऽचक्षिरे ॥१०॥

(धीराणाम्) विद्वानों के (तत् विऽचक्षिरे) व्याख्यानो में (नः) हम (इति) यही (शुश्रुम) सुनते आए हैं कि (ये) वह (अविद्यायाः) अज्ञान में जीने के परिणाम (अन्यत्) कुछ (आहुः) बताते हैं और (विद्यायाः) विद्या के दुरुपयोग अथवा उसको आचरण में न लाने के परिणाम (अन्यत्) कुछ और (एव) ही (आहुः) बताते हैं ।

ग्यारहवें मन्त्र में अज्ञान से ज्ञान की ओर जाने का लाभ बताया गया है ।

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥११॥

ईशावास्य ११, यजुः ४०.१४

विद्याम् । च । अविद्याम् । च । यः । तत् । वेद । उभयम् । सह ॥

अविद्यया । मृत्युम् । तीर्त्वा । विद्यया । अमृतम् । अश्नुते ॥११॥

ईशावास्योपनिषद् । Eeshaavaasyopaniṣhad

The next six mantras describe two cycles, the cycle of ignorance and knowledge and the cycle of life and death. Those who acknowledge and focus only on one aspect of these cycles can never realise their full potential. Recognising these aspects and seamlessly moving back and forth between them shall lead one onto the path of nirvaṇa.

In the ninth mantra the sage advises about the harm from the ignorance or from the improper use of knowledge.

9. andham tamah pra vishanti ye'vidyaamupaasate,

tato bhooya'iva te tamoya'u vidyaayaam rataah. Eeshaavaasya 9, Yajuh 40.12

andham tamah pra vishanti
ye avidyaam upaasate,
tatah bhooyah iva te tamah
ye u vidyaayaam rataah.

(ye) **Those who (upaasate) prefer to stay (avidyaam) in ignorance, (pra vishanti) live their life (andham tamah) in darkness; however, (ye) those who (rataah) become egotistical (vidyaayaam) after attaining knowledge, (te) they (bhooyah) lead (tatah) into (iva) even (u) greater (tamah) darkness.**

In the tenth mantra the sage continues to talk about the harm from ignorance or from the improper use of knowledge.

10. anyadevaahurvidyaayaa'anyadaahuravidyaayaah,

iti shushruma dheeraaṇaam ye nastadvichachakṣhire.

anyat eva aahuḥ vidyaayaah
anyat aahuḥ avidyaayaah,
iti shushruma dheeraaṇaam
ye naḥ tat vi-chachakṣhire.

Eeshaavaasya 10, Yajuh 40.13

(naḥ) **We (shushruma) hear from the (vi-chachakṣhire) discourses of the (dheeraaṇaam) learned; (ye) they (aahuḥ) say (tat iti) that (avidyaayaah) living in ignorance brings (anyat) different results and (vidyaayaah) misuse of knowledge or failure to practically use the knowledge in one's own life brings (anyat) different results (eva) altogether.**

In the eleventh mantra the sage discusses the benefit of moving from ignorance to enlightenment.

11. vidyaam cha avidyaam cha yastadvedobhayaṁ saha,

avidyaaya mṛityun teertvaa vidyaaya'mṛitamashnute.

vidyaam cha avidyaam cha
yah tat veda ubhayam saha,
avidyaaya mṛityum teertvaa
vidyaya amṛitam ashnute.

Eeshaavaasya 11, Yajuh 40.14

(यः) यह (वेद) जानो कि (अविद्याम्) अज्ञान (च) और (विद्याम्) ज्ञान (उभयम्) दोनों ही (सह) एक चक्र में साथ साथ हैं । अज्ञानी ज्ञान प्राप्त करता है परन्तु जब तक वह ज्ञान जीवन में लागू न करे तब तक वह अज्ञानी ही रहता है । ज्ञान को जीवन में लागू करने के बाद उसको अपनी अज्ञानता का और अधिक भान होता है और वह ज्ञान प्राप्ति के लिए अधिक परिश्रम करता है । (तत्) इस (अविद्याया) अज्ञान के (मृत्युम्) विनाश से (विद्याया) ज्ञान की और जाने के सुचक्र से मनुष्य (तीर्त्वा) बन्धनों से तर (अमृतम्) मोक्ष को (अश्रुते) प्राप्त होता है ।

बारहवें मन्त्र में जीवन के भोगों में रमे रहने वाले अथवा मृत्यु को आत्मा का अन्त मानने वाले, दोनों प्रकार के मनुष्यों के अन्धकारमय जीवन के बारे में कहा गया है ।

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।

ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ सम्भूत्यां रताः ॥ १२॥

ईशावास्य १२, यजुः ४०.९

अन्धम् । तमः । प्र । विशन्ति । ये । असम्भूतिमित्यसम्भूतिम् । उपासन्त इत्युपऽआसते ॥

ततः । भूयऽइवेति भूयऽइव । ते । तमः । ये । ऊँऽइत्यूँ । सम्भूत्यामिति सम्भूत्याम् । रताः ॥ १२॥

(ये) जो लोग (असम्भूतिम्) मृत्यु को आत्मा का अन्त मान उसकी (उपऽआसते) उपासना करते हैं वे (अन्धम् तमः) अन्धकारमय जीवन (प्र विशन्ति) बिताते हैं और (ये) जो (सम्भूत्याम्) जीवन को ही सब कुछ मान सन्सारिक भोग विलास में (रताः) डूबे रहते हैं (ते) वे (उ ततः भूयऽइव) उससे भी अधिक (तमः) अन्धकार में जीते हैं ।

तेरहवें मन्त्र में कहा गया है कि जीवन के भोगों में रमे रहने वाले अथवा मृत्यु को आत्मा का अन्त मानने वाले, दोनों के भिन्न परिणाम हैं ।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।

इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचक्षिरे ॥ १३॥

ईशावास्य १३, यजुः ४०.१०

अन्यत् । एव । आहुः । सम्भवादिति सम्भवात् । अन्यत् । आहुः । असम्भवादित्यसम्भवात् ॥

इति । शुश्रुम । धीराणाम् । ये । नः । तत् । विचक्षिरे इति विचक्षिरे ॥ १३॥

(धीराणाम्) विद्वानों के (तत् विचक्षिरे) व्याख्यानों में (नः) हम (इति) यही (शुश्रुम) सुनते आए हैं कि (ये) वह (सम्भवात्) जीवन को सब कुछ मानने के परिणाम (अन्यत्) कुछ (आहुः) बताते हैं और (असम्भवात्) मृत्यु को आत्मा के अन्त मानने के परिणाम (अन्यत्) कुछ और (एव) ही (आहुः) बताते हैं ।

ईशावास्योपनिषद् । Eeshaavaasyopaniṣhad

(ubhayam) **Both** (avidyaam) **ignorance** (cha) and (vidyaam) **enlightenment** (saha) **coexist in a cycle. Ignorant may attain knowledge, however, ignorance persists until that knowledge is properly implemented in one's life. After implementation only** (yah) **one** (veda) **realizes that there is a need to learn more. (tat) This virtuous cycle, in which** (vidyayaa) **enlightenment highlights the need for further enlightenment, leads to** (teertvaa) **freedom from** (mṛityum) **bondage of** (avidyayaa) **ignorance and** (ashnute) **attainment of** (amṛitam) **nirvaṇa.**

In the twelfth mantra the sage advises to look beyond the material pleasure and death, and pray only to the one and only one God who is truly worthy of our prayers.

12. andhantamaḥ pra vishanti ye'sambhootimupaasate, tato bhooya'iva te tamo ya'u sambhootyaam rataaḥ.

andham tamaḥ pra vishanti
ye asam-bhootim upaasate,
tataḥ bhooyaḥ iva te tamaḥ
ye u sambhootyaam rataaḥ.

Eeshaavaasya 12,Yajuh 40.9

(ye) **Those who** (upaasate) **view** (asambhootim) **death as the end of the soul** (pra vishanti) **remain in** (andhantamaḥ) **darkness. And** (ye) **those who treat** (sambhootyaam) **life as ultimate and remain** (rataaḥ) **engrossed in the material pleasures, (te) they** (bhooyaḥ) **are** (iva) **even in a** (tataḥ u) **greater** (tamaḥ) **darkness.**

In the thirteenth mantra the sage advises about different outcomes to being engrossed in the material pleasure or viewing the death as the end of the soul.

13. anyadevaahuḥ sambhavaadanyadaahurasambhavaat, iti shushruma dheeraaṇaam ye nastadvichachakṣhire.

anyat eva aahuḥ sam-bhavaat
anyat aahuḥ asambhavaat,
iti shushruma dheeraaṇaam
ye naḥ tat vi-chachakṣhire.

Eeshaavaasya 13,Yajuh 40.10

(naḥ) **We** (shushruma) **hear from the** (vi-chachakṣhire) **discourses of the** (dheeraaṇaam) **learned; (ye) they** (aahuḥ) **say** (tat iti) **that** (sambhavaat) **being engrossed in the material pleasure brings** (anyat) **different results and** (asambhavaat) **believing death as the end of the soul, brings** (anyat) **different results** (eva) **altogether.**

चौदहवें मन्त्र में जीवन और मृत्यु चक्र का ज्ञान है ।

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयं सह ।

विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते ॥१४॥

ईशावास्य १४, यजुः ४०.११

सम्भूतिमिति सम्भूतिम् । च । विनाशमिति विनाशम् । च । यः । तत् । वेद । उभयम् । सह ॥

विनाशेनेति विनाशेन । मृत्युम् । तीर्त्वा । सम्भूत्येति सम्भूत्या । अमृतम् । अश्नुते ॥१४॥

(सम्भूतिम्) जीवन (च) और (विनाशम्) मृत्यु (उभयम्) दोनों (सह) साथ साथ हैं । जन्म के साथ मृत्यु शुरु हो जाती है और मृत्यु के साथ ही जन्म की तैयारी, (तत्) यह (वेद) जान लेने वाला (यः) मनुष्य (सम्भूत्या) जन्म (विनाशेन मृत्युम्) मृत्यु चक्र से (तीर्त्वा) तर (अमृतम्) मोक्ष को (अश्नुते) प्राप्त होता है ।

पन्द्रहवें मन्त्र में सबके अन्तःकरण मे छिपे सत्य के विषय में कहा गया है ।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।

यजुः ४०.१७

तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥१५॥

ईशावास्य १५

हिरण्मयेन । पात्रेण । सत्यस्य । अपिहितमित्यपिहितम् । मुखम् ।

तत् । त्वम् । पूषन् । अपावृणु । सत्यधर्माय । दृष्टये ॥१५॥

(अपिहितम्) ढके हुए (मुखम्) मुख वाले (हिरण्मयेन) स्वर्णिम (पात्रेण) बर्तन अर्थात् हमारे अन्तःकरण में (सत्यस्य) सत्य छिपा है । (पूषन्) अपनी पुष्टि चाहने वाले मनुष्य! (त्वम्) तू (तत्) इस (सत्यधर्माय) सत्य को (दृष्टये) देखने के लिए (अपावृणु) अज्ञान के आवरण को दूर हटा दे ।

सोलहवें मन्त्र में, संसार की चमक दमक से संयम पूर्वक ध्यान हटा कर उसके पीछे छिपी ईश्वर की व्यवस्था को जानने का उपदेश है ।

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन्समूह ।

तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि ।

योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥१६॥

ईशावास्य १६

पूषन् । एकर्षे । यम । सूर्य । प्राजापत्य । व्यूह । रश्मीन् । समूह ॥

तेजः । यत् । ते । रूपम् । कल्याणतमम् । तत् । ते । पश्यामि ॥

यः । असौ । असौ । पुरुषः । सः । अहम् । अस्मि ॥१६॥

In the fourteenth mantra the sage touches upon the cyclicity of life and death.

**14. sambhootiñ cha vinaashañ cha yastadvedobhayañ saha,
vinaashena mṛityun teertvaa sambhootyaamṛitamashnute.**

sam-bhootim cha vinaasham cha
yaḥ tat veda ubhayam saha,
vinaashena mṛityum teertvaa
sam-bhootyaa amṛitam ashnute.

Eeshaavaasya 14, Yajuh 40.11

(sambhootim) Life (cha) and (vinaasham) death (ubhayam) both go (saha) hand in hand. With birth the process of aging and death starts and with death starts the process of new incarnation. (yaḥ) That person who (veda) understands (tat) this cyclicity, is (teertvaa) not bothered by the (vinaashena mṛityum) ups and downs of (sambhootya) life and (ashnute) attains (amṛitam) nirvaana.

In the fifteenth mantra the sage recognizes our own conscience as the repository of the truth.

**15. hiraṇmayena paatreṇa satyasyaapihitam mukham,
tattvam pooṣhannapaavṛiṇu satyadharmaaya dṛiṣṭaye.**

Yajuh 40.17

Eeshaavaasya 15

hiraṇmayena paatreṇa
satyasya api-hitam mukham,
tat tvam pooṣhan apaavṛiṇu
satya-dharmaaya dṛiṣṭaye.

(hiraṇmayena) The golden (paatreṇa) vessel with its (mukham) mouth (apihitam) covered, hides (satyasya) the truth. (pooṣhan) O welfare seeker! This golden vessel is nothing but your own conscience. In order (dṛiṣṭaye) to see (tat) that (satya-dharmaaya) truth (tvam) you have to (apaavṛiṇu) remove the cover of ignorance.

In the sixteenth mantra the sage preaches that one should focus on God who is the force behind the material attractions of nature.

**16. pooṣhannekarṣhe yama soorya praaajaapatya vyooḥa
rashmeensamooḥa,
tejo yatte roopañ kalyaṇataman tatte pashyaami,
yo'saavasau puruṣhaḥ so'hamasmi.**

Eeshaavaasya 16

pooṣhan ekarṣhe yama soorya
praaajaapatya vyooḥa rashmeen samooḥa,
tejaḥ yat te roopam kalyaṇa-tamam tat te pashyaami,
yaḥ asau asau puruṣhaḥ saḥ aham asmi.

(पूषन्) हे पुष्टिदाता! (एकर्षे) हे अद्वितीय ऋषि! (प्राजापत्य) प्रजा का पालन करने वाले! (यम) संसार को नियम में चलाने वाले! (सूर्य) प्रकाशवान! इस संसार में (व्यूह) फैले (रश्मीन्) चमक दमक वाले आकर्षण (समूह) को समेट लिजिए ताकि (ते) तेरा (यत्) जो (कल्याणतमम्) कल्याणतम (तेजः) तेजस्वी (रूपम्) रूप है (तत् ते) उस को (पश्यामि) मैं देख समझ सकूँ । ईश्वर उत्तर दे रहें हैं कि (यः) इस (असौ असौ) सब प्रकृति की व्यवस्था के पीछे जो (पुरुषः) चेतना व बल है (सः) वह (अहम्) मैं (अस्मि) ही तो हूँ, आसक्ति से दूर हो मुझपर ही ध्यान लगाओ ।

सतरहवें मन्त्र में सलाह दी गई है कि अपने जीवन के हर क्षण को अपने अन्तिम क्षण की तरह जियो ।

वा॒युरनि॑लम॒मृत॑मथे॒दं भस्मा॑न्तु॒ शरी॑रम् ।

ओ३म् क्रतो॑स्मर कृत॑स्मर क्रतो॑स्मर कृत॑स्मर ॥१७॥

ईशावास्य १७, यजुः ४०.१५

वा॒युः । अनि॑लम् । अ॒मृत॑म् । अथ॑ । इ॒दम् । भस्मा॑न्तुमिति॒ भस्म॑ऽअन्तम् । शरी॑रम् ॥

ओ३म् । क्रतो॑ इति॒ क्रतो॑ । स्मर॑ । कृत॑म् । स्मर॑ । क्रतो॑ । स्मर॑ । कृत॑म् । स्मर॑ ॥१७॥

हे (क्रतो) कर्मशील मनुष्य! (अथ) निरन्तर हरेक (वायुः अनिलम्) श्वास में (ओ३म्) ईश्वर के नाम का (स्मर) स्मरण कर, अपने (कृतम्) किए हुए कर्मों का (स्मर) स्मरण कर । यह स्मरण मात्र अन्तिम समय में ही करने के लिए नहीं है । (इदम्) इस (शरीरम्) शरीर की सत्ता का (अन्तम्) अन्त (भस्म) भस्म में है परन्तु आत्मा (अमृतम्) अमर है ।

अठारहवें मन्त्र में प्रार्थना है कि प्रभु हमे बुराईयों से दूर कर धर्म के अनुसार ज्ञान और धन प्राप्त कराइये ।

अग्ने॑ नय॑ सु॒पथा॑ रा॒येऽअ॒स्मान् विश्वा॑नि देव॒ व॒युना॑नि वि॒द्वान् ।

युयो॑ध्य॒स्मज्जु॑हुरा॒णमे॒नो भूयि॑ष्ठां ते नम॑ऽउक्तिं विधेम ॥१८॥

ईशावास्य १८, यजुः ५.३६, यजुः ४०.१६

अग्ने॑ । नय॑ । सु॒पथेति॑ सु॒पथा॑ । रा॒ये । अ॒स्मान् । विश्वा॑नि । दे॒व । व॒युना॑नि । वि॒द्वान् ॥

युयो॑धि । अ॒स्मत् । जु॒हुरा॒णम् । ए॒नः । भूयि॑ष्ठां । ते । नम॑ऽउक्तिमिति॒ नमः॑ऽउक्तिम् । वि॒धेम ॥१८॥

हे (देव) दिव्य (अग्ने) प्रकाशस्वरूप जगदीश्वर! हम (विधेम) विधिपूर्वक (उक्तिम्) प्रशंसाओं द्वारा (ते) आपको (भूयिष्ठाम्) बार-बार (नमः) नमन करते हैं । (विद्वान्) सब कुछ जानने वाले प्रभु (अस्मत्) हम लोगों से (जुहुराणम्) कुटिलतारूप (एनः) पापाचरण को (युयोधि) पृथक् कीजिए । (अस्मान्) हमें (सुपथा) धर्मानुकूल मार्ग से (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) ज्ञान और (राये) धन (नय) प्राप्त कराइये ।

।

(*pooṣhan*) O Nourisher! (*ekarṣhe*) O Supreme Knowledgeable! (*prajaapatya*) O Sustainer of all beings! (*yama*) O Creator and Upholder of the order in the Universe! (*soorya*) O Source of Illumination! Please (*samooha*) roll away all of the (*rashmeen*) glittering attractions (*vyoooha*) spread over this World, so that (*pashyaami*) I can see and perceive (*te*) your (*kalyaanatamam*) most beneficial (*tejah*) radiant (*roopam*) beauty. God responds to this prayer and says “look beyond the attractions as (*purushah*) the entity (*yah*) who is the force behind (*asau asau*) all of these attractions (*sah*) that entity (*asmi*) is (*aham*) myself. Detach yourself from pleasures and focus on me.”

In the seventeenth mantra the sage advises us to live every moment of one’s life as if it were the last.

**17. vaayuranilamamṛitamathedam bhasmaantaṁ shareeram,
o3m krato smara kṛitaṁ smara krato smara kṛitaṁ smara.**

vaayuh anilam amṛitam atha idam
bhasma-antam shareeram,
o3m krataḥ smara kṛitam smara
krataḥ smara kṛitam smara.

Eeshaavaasya 17, Yajuh 40.15

O (*krataḥ*) doer of deeds! With every (*vaayuh anilam*) breath, (*atha*) continuously (*smara*) think of (*o3m*) God’s name and also (*smara*) think of your own (*kṛitam*) deeds. These thoughts are not to be left for just the last breadth alone. (*edam*) This (*shareeram*) physical body (*antam*) ends in the form of (*bhasma*) ashes however the soul is (*amṛitam*) deathless.

In the eighteenth mantra the sage offers a prayer to God to remove the evil tendencies from us and to help us obtain righteous knowledge and wealth.

**18. agne naya supathaa raaye’asmaan vishvaani deva vayunaani vidvaan,
yuyodhyasmajjuhuraanameno bhooyiṣṭhaan te nama’uktim
vidhema.**

Eeshaavaasya 18, Yajuh 5:36, Yajuh 40.16

agne naya su-pathaa raaye asmaan
vishvaani deva vayunaani vidvaan,
yuyodhi asmat juhuraanam enaḥ
bhooyiṣṭhaam te namaḥ uktim vidhema.

O (*deva*) Divine (*agne*) source of all illumination! (*bhooyiṣṭhaam*) Repeatedly (*vidhema*) with devotion we (*uktim*) sing (*te*) your praises and (*namaḥ*) bow to you. O (*vidvaan*) Omniscient God! Please (*yuyodhi*) take away (*asmat*) from us the (*juhuraanam*) tendencies (*enaḥ*) to transgress your laws. Guide us on (*supathaa*) the righteous path so that (*asmaan*) we can (*naya*) attain (*vishvaani*) all of (*vayunaani*) the knowledge and (*raaye*) the wealth.